युवा शक्ति के उत्थान में श्रीराम शर्मा आचार्य के धार्मिक एवं नैतिक विचारों का योगदान

DOI: https://doi.org/10.63345/ijrsml.v13.i12.7

डॉ सचिन कुमार

एसोसिएट प्रोफेसर (इतिहास)

डी.ए.वी कॉलेज,मुजफ्फरनगर,

माँ शाकुम्भरी विश्वविद्यालय सहारनपुर (उत्तर प्रदेश)

सार

"युवा पीढ़ी को अपनी शारीरिक, मानसिक, आर्थिक, सामाजिक, नैतिक और आध्यात्मिक स्थिति को ऊँचा उठाने व अपने को एक आदर्श नागरिक बनाना इतना बड़ा धर्मकार्य है, जिसकी तुलना अन्य किसी भी पुण्य परमार्थ से नहीं की जा सकती।"

श्रीराम शर्मा आचार्य जी के ऐसे सुविचारों पर चलकर ही भटकती युवा पीढ़ी को उचित दिशा-निर्देश प्राप्त होंगे। देश के युवा यदि सशक्त, सक्रिय, संस्कारवान एवं सुविचारों वाले होंगे, तो देश को उन्नत होने से कोई शक्ति नहीं रोक सकती। किसी भी राष्ट्र की उन्नति उसकी संस्कारवान युवा भावी पीढ़ी ही तय करती है। जब युवा सशक्त और नैतिक होंगे, तब स्वस्थ समाज का निर्माण होना भी सुनिश्चित होता है।

बीज शब्द

श्रीराम शर्मा आचार्य, नैतिकता, युवा चेतना केन्द्र, ईर्ष्या, तृष्णा, बलिदान

शोध का उद्देश्य

इस शोध पत्र में भारतीय युवा पीढ़ी को आधार मानकर समाज, राष्ट्र एवं धार्मिक क्षेत्र में उनकी दशा एवं दिशा का विश्लेषण कर उनकी स्थिति को रेखांकित करने का प्रयास किया गया है। हमारी आने वाली पीढ़ियाँ, समाज के सम्मानित नागरिक, तथा शोध के क्षेत्र से जुड़े शिक्षक एवं शोधार्थी भी इस शोध पत्र से अमूल्य लाभ उठा सकते हैं। इसी उद्देश्य को दृष्टिगत रखते हुए इस शोध पत्र का निर्माण किया गया है।

शोध विधि

प्रस्तुत शोधपत्र विश्लेषणात्मक एवं वर्णनात्मक विधि पर आधारित है। इस शोध पत्र में द्वितीयक स्रोतों का प्रयोग किया गया है, जैसे— पुस्तकें, शोधपत्र एवं पत्रिकाएँ। इन स्रोतों का संदर्भ ग्रहण करते हुए वर्णनात्मक व्याख्या तथा सार्थक निष्कर्ष निकालने का प्रयास किया गया है।

व्याख्या

उत्तिष्ठत जाग्रत प्राप्य वरान्निबोधत।
क्षुरस्य धारा निशिता दुरत्यया दुर्गं पथस्तत्कवयो वदन्ति।।[1]

(कठोपनिषद 1.3.14)

हे मनुष्यों! जागो, उठकर खड़े होओ और श्रेष्ठ एवं ज्ञानी पुरुषों से ज्ञान प्राप्त करके परमात्म तत्व को जानो। विद्वान कहते हैं कि यह मार्ग उतना ही दुरूह है, जितना कि छुरे की धार पर चलना।

युवा स्यात साधु युवाध्यायकः आशिष्ठो दृढिष्ठो बलिष्ठः।।[2]

(तैत्तिरीय उपनिषद 2.8.1)

अर्थात— युवा बनो, युवा साधु स्वभाव वाले हों, अध्ययनशील हों, व्यवहारकुशल हों, दृढ़ निश्चय वाले हों एवं बलिष्ठ हों। संभव है कि उपरोक्त पंक्तियाँ श्रीराम शर्मा आचार्य जी की भी प्रेरणा स्रोत रही हों।

श्रीराम शर्मा आचार्य जी का जन्म 20 सितम्बर 1911 को उत्तर प्रदेश के आगरा जिले में हुआ था। उन्होंने अपना सम्पूर्ण जीवन भारतीय संस्कृति के पुनरुत्थान, सामाजिक जागरण और आध्यात्मिक उन्नयन के लिए समर्पित कर दिया। उन्हें भारतीय आध्यात्मिक जगत के एक महान संत, विचारक और युगद्रष्टा के रूप में जाना जाता है। उनका जीवन समाज को नई दिशा देने और विशेष रूप से युवाओं को जागरूक करने में समर्पित रहा।

उन्होंने **"युग निर्माण योजना"** और **"अखिल विश्व गायत्री परिवार"** जैसे जन-जागृति आंदोलनों की शुरुआत की। उनका मूल उद्देश्य था — **व्यक्ति निर्माण, समाज निर्माण और राष्ट्र निर्माण**। आचार्य जी का मानना था कि युवावस्था केवल ऊर्जा का स्रोत नहीं, बल्कि परिवर्तन की शक्ति है। उन्होंने युवाओं को आत्मशुद्धि, स्वाध्याय, सेवा और संयम का मार्ग दिखाया। उन्होंने कहा—

"हम बदलेंगे, युग बदलेगा"।[3]

यह केवल एक नारा ही नहीं था, बल्कि एक ऐसा आंदोलन था जिसने लाखों युवाओं के जीवन को दिशा प्रदान की। उनके लेखन में गहरी आध्यात्मिकता और वैज्ञानिक दृष्टिकोण — दोनों का समावेश था। उन्होंने 3,000 से अधिक पुस्तकों की रचना कर ज्ञान को जन-जन तक पहुँचाने का प्रयास किया। उनका मानना था कि **शिक्षित, चरित्रवान और जागरूक युवा ही राष्ट्र की सबसे बड़ी पूँजी है**।

आचार्य जी का स्पष्ट मत था कि राष्ट्र के उत्थान के लिए केवल शिक्षित युवावर्ग पर्याप्त नहीं है, बल्कि **चरित्रवान, साहसी और सशक्त व्यक्तित्व वाले युवाओं** की आवश्यकता है। वे कहते थे—

"युवा यदि जाग जाएँ, तो कोई शक्ति उन्हें रोक नहीं सकती।"

उन्होंने युवाओं को **तीन सूत्र** दिए—

1. **साधना** — आत्मानुशासन और विचारों की शुद्धि के लिए।
2. **सेवा** — समाज के प्रति कर्तव्य भावना विकसित करने के लिए।
3. **स्वाध्याय** — निरंतर ज्ञान अर्जन और आत्ममंथन के लिए।

उन्होंने कलम को शस्त्र बनाया और "विचार क्रांति" का नेतृत्व किया। इस आंदोलन ने युवाओं को नकारात्मक विचारों से बाहर निकालकर उन्हें सामाजिक उत्तरदायित्व और राष्ट्र निर्माण की दिशा में प्रेरित किया। उन्होंने गायत्री परिवार के माध्यम से लाखों युवाओं को जोड़ा, उन्हें प्रशिक्षण दिया तथा "युवा चेतना केन्द्र", "युवाओं का प्रज्ञा अभियान" और "युग निर्माण योजना" जैसे अनेक कार्यक्रम चलाए। इन सभी कार्यक्रमों का मुख्य उद्देश्य था — युवाओं में नेतृत्व कौशल का विकास, नैतिक मूल्यों की स्थापना तथा व्यसनमुक्त, स्वावलंबी जीवन की प्रेरणा।

आचार्य जी ने युवाओं को यह भी सिखाया कि आधुनिक विज्ञान और प्राचीन अध्यात्म एक-दूसरे के विरोधी नहीं, बल्कि पूरक हैं। उन्होंने सद्गुणों को जीवन में उतारने और कर्मयोग की भावना को अपनाने पर विशेष बल दिया। अपनी लेखनी के माध्यम से आचार्य युवाओं को उनकी आत्मशक्ति से परिचित कराते हुए लिखते हैं—

"आपको अपने जीवन में अनेक प्रकार की आवश्यकताएँ अनुभव होती हैं, अनेक अभाव प्रतीत होते रहते हैं। अनेक इच्छाएँ अतृप्त दिशा में अंतःकरण में कोलाहल करती हैं। इस प्रकार का अशांत एवं उद्विग्न जीवन जीने से क्या लाभ? विचार कीजिए कि इनमें कितनी इच्छाएँ वास्तविक हैं और कितनी अवास्तविक? जो तृष्णाएँ मोह, ममता और भ्रम, अज्ञान के कारण उठ खड़ी हुई हैं, उनका विवेक द्वारा शमन कीजिए। क्योंकि इन अनियंत्रित वासनाओं की पूर्ति, तृप्ति और शांति संभव नहीं। एक को पूरा किया जाएगा तो दस नई उपज पड़ेंगी। जो आवश्यकताएँ वास्तविक हैं, केवल उनको ही प्राप्त करने के लिए अपने पुरुषार्थ को एकत्रित कर उसका उचित उपयोग कीजिए। पुरुष का पौरुष तत्व इतना शक्तिशाली है कि उसके द्वारा जीवन की सभी आवश्यकताएँ आसानी से पूरी हो सकती हैं। इसमें से अधिकांश का पौरुष सुषुप्त अवस्था में रहता है, क्योंकि उसे प्रेरणा देने वाली आत्मशक्ति अग्नि मंद पड़ जाती है। उसी अग्नि को जाग्रत कर शक्ति भंडार में चैतन्य किया जा सकता है। यह सचेत पौरुष हमारी

वास्तविक आवश्यकताओं को पूरी करने में समर्थ होता है। अभावग्रस्त चिंतातुर स्थिति से छुटकारा पाने के लिए तृष्णाओं का विवेक द्वारा शमन करें और आवश्यकता को पूर्ण करने वाले पौरुष को जगाने के लिए आत्मशक्ति की अग्नि को जगाएँ।"[4]

आचार्य जी के अनुसार **आत्मनिर्माण से बड़ा कोई पुण्य परमार्थ नहीं।** इसकी शक्ति का विस्तार इतना व्यापक है कि धरती को भी स्वर्ग तुल्य बनाया जा सकता है। उनके शब्दों में—

"इस संसार में अनेक प्रकार के पुण्य और परमार्थ हैं। शास्त्रों में नाना प्रकार के धर्म-अनुष्ठानों का सविस्तार विधि-विधान है और उनके सुविस्तृत माहात्म्यों का वर्णन है। दूसरों की सेवा-सहायता करना पुण्य कार्य है। इससे कीर्ति, आत्मसंतोष तथा सद्गति की प्राप्ति होती है। परन्तु इनमें सबसे बढ़कर एक पुण्य परमार्थ है और वह है आत्मनिर्माण। अपने दुर्गुणों, कुविचारों, कुसंस्कारों, ईर्ष्या, तृष्णा, क्रोध, दाह, क्षेम, चिंता, भय एवं वासनाओं को विवेक की सहायता से आत्मज्ञान की अग्नि में जला देना इतना बड़ा धर्म है, जिसकी तुलना सहस्र अश्वमेधों से नहीं की जा सकती। अपने अज्ञान को दूर करके मन-मंदिर में ज्ञान का दीपक जलाना भगवान की सच्ची पूजा है। अपनी मानसिक तुच्छता, दीनता, हीनता और दासता को हटाकर निर्भयता, सत्यता एवं प्रसन्नता की आत्मिक प्रवृत्तियाँ बढ़ाना करोड़ों मन सोना दान करने की अपेक्षा अधिक महत्वपूर्ण है।"

प्रत्येक मनुष्य अपना-अपना आत्मनिर्माण करे तो यह पृथ्वी स्वर्ग बन सकती है। फिर मनुष्यों को स्वर्ग जाने की इच्छा करने की नहीं, वरन् देवताओं को पृथ्वी पर आने की आवश्यकता अनुभव होगी। दूसरों की सेवा व सहायता करना इससे भी बड़ा पुण्य है। इसके अतिरिक्त अपनी शारीरिक, मानसिक, आर्थिक, सामाजिक, नैतिक और आध्यात्मिक स्थिति को उच्च रखना, तथा एक आदर्श नागरिक बनाना इतना बड़ा धर्मकार्य है, जिसकी तुलना अन्य किसी भी पुण्य परमार्थ से नहीं की जा सकती है।"[5]

क्षणिक पराजय से विचलित हो जाने वाली युवा पीढ़ी को संदेश देते हुए आचार्य जी पराजय को विजय के बीज की दृष्टि से देखने को कहते हैं—

"यदि सतत प्रयत्न करने पर भी तुम सफल नहीं हो रहे हो तो इसमें कोई हानि नहीं। पराजय कोई बुरी वस्तु नहीं है, यदि वह विजय के मार्ग में अग्रसर होते हुए मिली है तो प्रत्येक पराजय विजय मार्ग की दिशा में कुछ आगे बढ़ जाना है। उच्चतर ध्येय की ओर यह पहली सीढ़ी है। हमारी प्रत्येक पराजय यह स्पष्ट करती है कि अमुक दिशा में हमारी कमजोरी है, अमुक तत्व में हम पिछड़े हुए हैं या किसी विशिष्ट उपकरण पर समुचित ध्यान नहीं दे रहे हैं। पराजय हमारा ध्यान उस दिशा में आकर्षित करती है, जहाँ हमारी निर्बलता है, जहाँ हमारी मनोवृत्ति अनेक दिशाओं में बिखरी हुई है, जहाँ विचार और क्रिया परस्पर विरुद्ध दिशा में बढ़ रहे हैं, जैसे दुःख, क्लेश, शोक, मोह इत्यादि परस्पर विरोधी इच्छाएँ जहाँ हमें चंचल कर एकाग्र नहीं होने देतीं। किसी-न-किसी दिशा में प्रत्येक पराजय हमें कुछ सिखा जाती है। मिथ्या कल्पनाओं को दूर कर हमें कुछ-न-कुछ सबल बना जाती है। हमारी विश्रंखल वृत्तियों को एकाग्रता का रहस्य सिखाती है। अनेक महापुरुष केवल इसी कारण सफल हुए क्योंकि उन्हें पराजय की कड़वाहट को चखना पड़ा था। यदि उन्हें यह पराजय न मिलती, तो वे महत्वपूर्ण विजय कदापि प्राप्त न कर सकते। अपनी पराजय से उन्हें ज्ञात हुआ कि उनका संकल्प और इच्छाशक्ति निर्बल है, चित्त स्थिर नहीं है, अंतःकरण में आत्मशक्ति पर्याप्त रूप से जाग्रत नहीं हुई है। इन भूलों को उन्होंने समझा और दूर कर विजय-पथ पर अग्रसर हुए।"[6]

प्रतियोगिता के इस दौर में विशेषकर युवा वर्ग में धैर्य गुण का अभाव अक्सर देखा जा सकता है। ऐसे में अवसर की प्रतीक्षा किए बिना ही वह अपने आप को हारा हुआ मानने लगते हैं। जबकि प्रत्येक मनुष्य की अपनी विशेष योग्यताएँ होती हैं, जिन्हें पहचानने और निखारने हेतु धैर्य का परिचय देना अवश्यंभावी है। आचार्य जी कहते हैं—

"इस संसार रूपी समुद्र में असंख्य प्रकार के अत्यंत मूल्यवान रत्न इंच-इंच भूमि में प्रचुर परिमाण में भरे पड़े हैं। यह रत्नराशि परमात्मा ने इसलिए बिछा रखी है कि उनका राजकुमार मनुष्य उसके द्वारा अपनी श्री-वृद्धि करे। परन्तु शर्त यह है कि उन्हें प्राप्त करने की योग्यता सिद्ध करे, उसे ही वे दिए जाएँ। जैसे छोटे बालक को या बुद्धिहीनों को बंदूक नहीं दी जा सकती, वैसे ही अयोग्य व्यक्तियों को यह रत्नराशि नहीं दी जा सकती। नाबालिगों को राज्य-दरबार में अप्रामाणिक माना जाता है, उन्हें वे अधिकार नहीं मिलते जो एक साधारण नागरिक को मिलने

चाहिए। किंतु जैसे ही वह नाबालिग अपनी योग्यता का प्रमाण प्रस्तुत कर देता है, वैसे ही उसे राज्य-दरबार में प्रमाणिकता प्राप्त हो जाती है। मनुष्य की नाबालिगी उसकी लापरवाही और आलस्य है। जब तक सावधानी, जागरूकता और परिश्रमशीलता जाग्रत नहीं होती, तब तक वह नाबालिगी दूर नहीं होती और न तब तक संसार की बहुमूल्य संपदाएँ प्राप्त हो सकती हैं। किंतु जब अपनी उद्योगशीलता, परिश्रमप्रियता और जागरूकता प्रमाणित कर दी जाती है, तो परमात्मा द्वारा इस सृष्टि में पग-पग पर बिछाए हुए रत्नों की राशि हमें आसानी से प्राप्त होने लगती है।"[7]

भागीरथ ने तप करके गंगा को मृत्युलोक में लाया, पार्वती ने तप करके शिव को वर रूप में पाया, ध्रुव ने तप करके अचल राज्य प्राप्त किया। अनेकानेक प्रमाण इस बात के मौजूद हैं कि तप से ही संपदा प्राप्त होती है। मनोवांछा पूर्ण करने का एकमात्र साधन तप ही है। परिणाम प्रयत्न का ही फल है। क्या देव, क्या असुर — जिसने भी ऐश्वर्य पाया है, वरदान उपलब्ध किए हैं, वे तप के द्वारा ही प्राप्त किए हैं।

अनंत संपदाओं का ढेर अपने चारों ओर बिखरा पड़ा हो, तो भी कोई उसे तप के बिना प्राप्त नहीं कर सकता। समुद्र के भीतर अतीत काल से अनेक रत्न छिपे पड़े थे। उनका अस्तित्व किसी पर प्रकट न था, किंतु जब देवता और असुरों ने मिलकर समुद्र-मंथन किया, तो उसमें से चौदह अमूल्य रत्न निकले। यदि मंथन न किया जाता, तो चौदह क्या, चौथाई रत्न भी किसी को न मिलते। प्रयत्न, परिश्रम और कष्ट-सहन से ही किसी ने कुछ प्राप्त किया है।

अकस्मात छप्पर फाड़कर मिल जाने के कुछ अपवाद कहीं-कहीं देखे और सुने जाते हैं, परंतु ये इतने कम होते हैं कि उन्हें सिद्धांत रूप में स्वीकार नहीं किया जा सकता। पूर्व जन्मों का संचित पुण्य एकदम कहीं प्रकट होकर कुछ संपदा अकस्मात उपस्थित कर दे — ऐसा होना असंभव नहीं है। कभी-कभी ऐसा हो जाता है कि किन्हीं व्यक्तियों को बिना परिश्रम के भी कुछ वस्तु मिल जाती है, परंतु इसे भी मुफ्त का माल नहीं कहा जा सकता। पूर्व संचित पुण्य भी परिश्रम और कष्ट-सहन द्वारा ही प्राप्त हुआ था। इस प्रकार भाग्य से अकस्मात प्राप्त होने वाले लाभों में भी अप्रत्यक्ष रूप से परिश्रम ही मुख्य होता है। **भाग्य का निर्माण तपस्या से ही होता है।**"[8]

इस प्रकार हम देखते हैं कि श्रीराम शर्मा आचार्य का युवा जागरण संदेश अत्यंत प्रेरणादायक और राष्ट्रीय चेतना से ओतप्रोत है। उनका संदेश युवाओं को आत्मनिर्भर, चरित्रवान और राष्ट्रसेवा के लिए समर्पित बनने की प्रेरणा देता है। उनके प्रमुख युवा जागरण संदेशों में से एक इस प्रकार है—

"युवा शक्ति राष्ट्र की सम्पत्ति है। उसे आचरण-प्रमाद और व्यसन से बचाकर अध्यात्म, सेवा और स्वावलम्बन की ओर मोड़ना चाहिए। चरित्रवान, विचारवान और कर्तव्यपरायण युवा ही देश का उज्ज्वल भविष्य गढ़ सकते हैं।"[9]

वे मानते थे कि युवा केवल शक्ति का स्रोत नहीं, बल्कि समाज को दिशा देने वाले निर्माता भी हैं। **विचार-क्रांति अभियान** के माध्यम से युवा अपनी सोच और समाज को बदल सकते हैं। आचार्य जी के अनुसार **संयम, सेवा और साधना** युवाओं का मार्गदर्शक त्रिकोण होना चाहिए। उनका विश्वास था कि यदि युवा दिशा और प्रेरणा प्राप्त कर लें, तो वे देश, समाज और आत्मिक जीवन में क्रांतिकारी परिवर्तन ला सकते हैं। क्योंकि भारत एक युवा राष्ट्र है, परन्तु यदि युवाओं की ऊर्जा को उचित मार्गदर्शन न मिले, तो यह विनाश का कारण बन सकती है।

"युवाओं! उठो, जागो, स्वयं को पहचानो और युग निर्माण में जुट जाओ। अपनी आंतरिक महानता को खोजो और बढ़ाओ ताकि मनुष्यता का समुचित लाभ प्राप्त कर सको।"[10]

युवा जागृति अभियान के अंतर्गत "युवा" शब्द को परिभाषित करते हुए उन्होंने कहा कि युवा वह है जिसके शब्दकोश में *असंभव* शब्द न हो; जो बाधाओं को चीर कर अपना मार्ग बनाने में विश्वास रखता हो; जो परिस्थितियों का दास नहीं, बल्कि उसका निर्माता, नियंत्रणकर्ता एवं स्वामी हो; जो कर्म पर विश्वास रखता हो तथा सुनहरे भविष्य के निर्माण की ओर अग्रसर हो— वही युवा है। उनका दृढ़ विश्वास था कि केवल डिग्रियाँ नहीं, बल्कि **चरित्र, संयम और सदाचार** ही युवा को महान बनाते हैं। इसके अतिरिक्त उन्होंने युवाओं को **युग-निर्माता** की संज्ञा देते हुए कहा कि देश और संस्कृति के नव-निर्माण का उत्तरदायित्व युवाओं के कंधों पर ही है।

स्वस्थ युवा—सबल राष्ट्रवाद,
शिक्षित युवा—युगांतशील राष्ट्र,
स्वावलम्बी युवा—सम्पन्न राष्ट्र,
सेवाभावी युवा—सुखी राष्ट्र,
सहयोगी युवा—समर्थ राष्ट्र।[11]

आचार्य जी ने युवाओं को आत्मबल, आत्मविश्वास और अध्यात्म से जोड़कर उनमें नैतिक नेतृत्व की भावना जगाई। उनका नारा था—"हम बदलेंगे, युग बदलेगा।" अर्थात् यदि युवा स्वयं को बदलें, तो पूरा युग बदल सकता है। इसी दिशा में आचार्य जी ने युवाओं को संयमित जीवन जीने की कला का भी बोध कराया, क्योंकि संयम के बिना साधना संभव नहीं। इन्द्रियों और मन का भटकाव ऊर्जा को व्यर्थ ही नष्ट करता है। किसी कवि ने मानव-मन के बारे में लिखा है—

मौन हिलोर किधर से आती, कब आती, क्यों आती।
कौन जानता, पर वह नर को, कहाँ-कहाँ ले जाती।

मन पर नियंत्रण करना भी सबसे बड़ा पुरुषार्थ है, क्योंकि इसी माध्यम से राष्ट्र की वर्तमान चुनौतियों का सफलतापूर्वक सामना किया जा सकता है। विश्व-क्रांति एवं सांस्कृतिक सद्भाव का संवाहक देश आज आतंकवाद और उग्रवाद के विस्फोटों से ग्रस्त है। लोकतंत्र की व्यवस्था एक उपहास मात्र बनती जा रही है। ऐसी विषम स्थिति में युवा शक्ति अंधकार में दीपक के समान प्रतीत होती है।

युवाओं को प्रेरित करते हुए आचार्य जी स्वतंत्रता-संघर्ष के सूत्रधार युवा-शक्ति का स्मरण कराते हैं, जिनमें रानी लक्ष्मीबाई, भगत सिंह, खुदीराम बोस, सुभाषचन्द्र बोस इत्यादि जैसे महान देशभक्तों की दीर्घा शामिल है। 1908 ई० में 18 वर्षीय किशोर खुदीराम बोस फाँसी के फंदे पर चढ़ने से पूर्व ये उद्गार व्यक्त करते हैं—

हँसी-हँसी चढ़ने फाँसी, देखिएगा जगतवासी।
एक बार विदाई दे माँ, आमि धूरे आसी।।[12]

अर्थात— दुनिया देखेगी कि मैं हँसते-हँसते फाँसी के फंदे पर चढ़ जाऊँगा। हे भारत माता! मुझे विदा दो, मैं बार-बार तुम्हारी कोख में जन्म लूँ। आचार्य जी आदर्शनिष्ठ युवा-शक्ति का आह्वान करते हुए कहते हैं कि आदर्शनिष्ठ युवा वे हैं जो अपने विकास के लिए नहीं, बल्कि समाज और राष्ट्र के कल्याण के लिए जीते हैं। वे भीड़ में खोते नहीं, बल्कि भीड़ को दिशा देने की क्षमता रखते हैं।

उपसंहार

आज जब युवा पीढ़ी दिशाहीनता, भौतिक लालसाओं और आत्मिक रिक्तता से जूझ रही है, श्रीराम शर्मा आचार्य जी के विचार उन्हें दिशा, दृष्टि और उद्देश्य प्रदान करते हैं। उनकी विचारधारा आज भी उतनी ही प्रासंगिक है जितनी उनके समय में थी— बल्कि आज के नैतिक संकट के दौर में और भी अधिक प्रासंगिक।

नव-निर्माण का कार्य केवल भवन या संस्था-निर्माण नहीं, बल्कि व्यक्ति और समाज-निर्माण है, और यह तभी संभव है जब युवा-शक्ति आदर्शनिष्ठ बने। श्रीराम शर्मा आचार्य जी ने युवाओं को एक नई दृष्टि दी— सेवा, साधना और स्वावलम्बन। यदि युवा उनके आदर्शों को अपनाएँ, तो समाज में सच्चे युग-परिवर्तन की शुरुआत संभव है।

नौजवानों उठो, वक्त यह कह रहा,
खुद को बदलो, ज़माना बदल जाएगा।
शक्तियों को लगाओ सही कार्य में,
देश का, विश्व का भाग्य खुल जाएगा।।

सन्दर्भ सूची

- कठोपनिषद, 1.3.14
- तैतिरीय उपनिषद, 2.8.1
- *युग निर्माण में युवा शक्ति का सुनियोजन*, ब्रह्मवर्चस, युग निर्माण योजना विस्तार ट्रस्ट।
- *अखण्ड ज्योति*, (अगस्त 2023), वर्ष 87, अंक 8।
- *अखण्ड ज्योति*, (मार्च 2022), वर्ष 86, अंक 3।
- *अखण्ड ज्योति*, (दिसम्बर 2023), वर्ष 87, अंक 12।
- *अखण्ड ज्योति*, (फरवरी 2022), वर्ष 86, अंक 2।
- *अखण्ड ज्योति*, (जुलाई 2021), वर्ष 85, अंक 7।
- *उत्तिष्ठत जाग्रत* (युवा जागरण), ब्रह्मवर्चस, श्री वेदमाता गायत्री ट्रस्ट।

- *उत्तिष्ठत जाग्रत* (युवा जागरण), ब्रह्मवर्चस, श्री वेदमाता गायत्री ट्रस्ट।
- *युग निर्माण में युवा शक्ति का सुनियोजन*, ब्रह्मवर्चस, युग निर्माण योजना विस्तार ट्रस्ट।
- *वर्तमान चुनौतियाँ और युवा वर्ग*, ब्रह्मवर्चस, युग निर्माण योजना विस्तार ट्रस्ट।

ISSN: 2321-2853
ESTD.2013
IJRSML